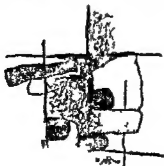
मिट्टी पर साथ साथ



अमृता भारती

मिट्टी पर साथ साथ

मिट्टी पर साथ साथ

अमृता भारती

जैकेट ॥ प्रणव कुमार वन्द्योपाध्याय

दस रुपये

 पश्यन्ती
नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित/ उद्योगशाला प्रेस
दिल्ली द्वारा मुद्रित/ पहला मुद्रण १९७६



संभावना प्रकाशन/ रेवती कुंज
हापुड़ २४५१०१ द्वारा वितरित

\

अपने

मेंवणा देश को

उसने मेरी उंगलियां छू दी हैं
मेरी उंगलियां महकने लगी हैं
उसके लिये कुछ कहने लगी हैं.

मिट्टी पर साथ साथ

अमृता भारती

आधुनिक हिन्दी कविता का विशिष्ट हस्ताक्षर. कविता के अतिरिक्त समय-समय पर वैचारिक लेख लिखती रही हैं शिक्षा बनारस हिन्दू विश्व-विद्यालय से प्राचीन भारतीय साहित्य मे पी-एच० डी०, १९६५-७१ के दरमियान बम्बई मे प्राध्यापिका रही १९७३-७४ मे साप्ताहिक 'नवजीवन पथ' का सम्पादन किया. सम्प्रति 'पश्यन्ती' से सम्बन्धित.

अन्य काव्य रचनाएं

मैं तट पर हू ॥ १९७१

आज या कल या सौ बरस बाद ॥ १९७५

मैंने पत्थरों में
फूल चेहरे देखे
मैंने चट्टानों में
समुद्र का संगीत सुना
मैं पूरी पृथिवी के रोमांच पर
उगती रंग
सृष्टि-गीत गाती हूं.

उसके भिक्षापात्र का
आकाश खाली है,—लेकिन
खेतों में धान पक गये हैं
कुओं में रस्सियां छोटी जाती हैं
और मिट्टी के घर
दिये बन गये हैं.

जिस दिन उसके किशोर हाथों ने भिक्षापात्र पकड़ा था
सारे जगत के भंडार भर गये थे
एक सुन्दर स्त्री अपने रेशमी आंचल से
हर द्वार की स्याही पोंछ रही थी
एक अदृश्य हाथ दीवारों पर स्वस्तिक रच रहा था.

उसके हाथ म कमडलु था, लेकिन उसने
किसी घर की
देहरी नही लाघी थी
किसी भी द्वार पर
'भिक्षा देहि' की
अलख नही जगायी थी
फिर भी वह
भिक्षुक की अकिंचनता से मडित था
उसका व्रत अयाचित भिक्षान्न था

पृथिवी को छूने के लिये
उसने अपने पाव नगे कर लिये थे
आकाश के आलिगन के लिये
उसका वक्ष खुला था.
कई बार उसके पात्र मे अन्न नही
नदी की मिट्टी थी
सर्दी की ठिठुरती रात मे
ओढने को वस्त्र नही
मजार की चादर थी

बरसती आग उसके होठो की हसी थी
और कठोर हिमपात
उसकी आखो की उज्ज्वलता

ऐसा सम्भव है
उस कमडलु के आकाश को देखकर
बाहर का आकाश

संकुचित हो गया हो
उस पात्र के पानी को देखकर सब तीर्थों ने
अपनी निजता को निचुड़ा हुआ पाया हो
कितनी ही बार उस कमंडलु में
पक्षियों ने रेत चुगे हों
चिड़ियों ने चोंच डाल नदियों का पानी पिया हो
अलग दिशाओं से आते दो वन्य प्राणी
उसमें अपनी परछाईं देख
पूर्व शत्रुभाव का स्मरण कर हँसे हों

सब नदियों, सरोवरों, समुद्रों ने उसमें
अपनी पहचान दृढ़ की हो

किस विलक्षण बीज की लकड़ी से
उस पात्र का निर्माण हुआ था
कि उसमें सब फूलों की महक थी
सब फलों की रसालता और
सब किसलयों की काया थी
किस चुने हुए क्षण में उस पर
बढ़ई ने अपना हाथ रखा था
कि उसमें बचपन की सुबह
यौवन की धूप और
बुढ़ापे की छाया थी.

उसके हाथ म कमडलु था, लेकिन उसने
किसी घर की
देहरी नही लाघी थी
किसी भी द्वार पर
'भिक्षा देहि' की
अलख नही जगायी थी
फिर भी वह
भिक्षुक की अकिंचनता से मडित था
उसका व्रत अयाचित भिक्षान्न था

पृथिवी को छूने के लिये
उसने अपने पाव नगे कर लिये थे
आकाश के आलिंगन के लिये
उसका वक्ष खुला था
कई बार उसके पात्र मे अन्न नही
नदी की मिट्टी थी
सर्दी की ठिठुरती रात मे
ओढने को वस्त्र नही
मज़ार की चादर थी

बरसती आग उसके होठो की हसी थी
और कठोर हिमपात
उसकी आखो की उज्ज्वलता

ऐसा सम्भव है
उस कमडलु के आकाश को देखकर
बाहर का आकाश

संकुचित हो गया हो
उस पात्र के पानी को देखकर सब तीर्थों ने
अपनी निजता को निचुड़ा हुआ पाया हो
कितनी ही बार उस कमंडलु में
पक्षियों ने खेत चुगे हों
चिड़ियों ने चोंच डाल नदियों का पानी पिया हो
अलग दिशाओं से आते दो वन्य प्राणी
उसमें अपनी परछाई देख
पूर्व शत्रुभाव का स्मरण कर हंसे हों

सब नदियों, सरोवरों, समुद्रों ने उसमें
अपनी पहचान दृढ की हो.

किस विलक्षण बीज की लकड़ी से
उस पात्र का निर्माण हुआ था
कि उसमें सब फूलों की महक थी
सब फलों की रसालता और
सब किसलयों की काया थी
किस चुने हुए क्षण में उस पर
बढ़ई ने अपना हाथ रखा था
कि उसमें बचपन की सुबह
यौवन की धूप और
बुढ़ापे की छाया थी.

उसने अपना साचा तोड दिया है
उसने अपना कंचुक उतार दिया है
वह परोसी हुई थाली को
अन्तिम प्रतीक्षा दे आया है
घर के कोने कोने को आखे कर आया है
उसने पृथिवी को पादुका की तरह पहन लिया है
उसने आकाश को कवच की तरह लपेट लिया है
उसने हृदय का स्पन्दन बदल लिया है
उसने अपना नया नाम रख लिया है

जब से वह अनिकेतन हुआ
उसके पैरो के नीचे केवल दूरिया थी, और
आखो मे चढे हुए बान का पैनापन

सबकी तरफ उसकी पीठ थी
पर पीछे
घरो की दीवारें द्वार बन गयी
कई घरो के द्वार सदा को खुले रह गये

जब वह मेरे घर के सामने से गुजरा

मैं द्वार पर नही थी—
उसने अन्दर आकर मुझे पुकारा था
मेरे भिक्षान्न को अपनी अजलि म भरा था

मैंने उसे
उसकी मुस्कान की ही रोशनी मे देखा था

उसके रग मे दूब का नयापन था, और
होठ हथेली तलवो पर पलाश की परछाईं
उसके बालो में मध्यरात्रि की गहनता और
चन्दन के तिलक में
दुइज के चाद की चमक थी

उसकी आखो में भविष्य के मिलन का सकेत था

दूसरे क्षण वह दहलीज की सीढिया उतर रहा था.

पल भर को मेरे अन्दर पहचान जागी थी
मैं साथ चलन के लिये उसके पीछे भागी थी
लेकिन उसके कधे के तरकश-पात्र में
मयूर पखो को देखकर चौक गयी थी
अपनी तरफ झुक आये
एक पख के नील में
अपने चेहरे को देखकर रुक गयी थी

इसीलिये वह अपना कमडलु छोड आया था
इसीलिये वह अपनी झोली
साथ नही लाया था

इसीलिये उसने मेरी देहरी लांघी थी
इसीलिये उसने अपना अयाचित
भिक्षा-व्रत तोड़ा था.

उसने मुझे अपनी अजलि में मागा था
मेरे अन्तरमुख को अपने नील में समेटा था.

अब अपने बाहर
मैं सिर्फ एक छाया थी
स्याह परछाई को और स्याह करती
एक काया थी.

सब अपने घरों को खुला छोड़ दो
सब अपनी गठरियां द्वार पर रख दो
वह किसी भी क्षण इधर से गुज़रेगा
सबकी मिट्टी का सोना कर देगा.

अब उसकी झोली में कृमि कीट भस्म विष्ठा
दुर्गन्धि मल मूत्र है
अब उसके भिक्षापात्र मे
श्लेष्म रक्त त्वचा और मांस है
अब वही उसका भोजन है
उसके मुख पर तृप्ति का आनन्द है

उसने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी है :

वह इस अपूर्व भिक्षा के लिये
हर द्वार पर जाता है
हाथ पसारे हर घर की देहरी लांघता है
लेकिन लोग अपनी गुदडी छिपाते हैं
कई बार उसे बैठकखाने दिखाते हैं

वह हंसता है :
आंगन में मल के ढेर पर बैठकर
धुआं पीता है
और एक चिनगारी को चुपके से
अन्दर रख
बाहर निकल आता है.

पिशाचों से उसकी पहचान बढ़ गयी है.

लोगों ने उसे पहचानना छोड़ दिया है
अपने घरों को पिछवाड़ा कर लिया है.
फिर भी वह शहर में आता है
दूर से भी फेंकी हुई भिक्षा ले जाता है.

उसके सिर पर पीले पहाड़ों का बोझ है.
उसकी आंखों में काले समुद्रों की काई है.

मैं उसके पीछे भागती हूं
जबर्दस्ती खींचकर
उसका पर्दा हटाती हूं.
क्षण भर को सारा जगत स्तम्भित होता है
उसकी कृतज्ञ हंसी से मेरा दर्पण टूटता है

समुद्र के द्वीप की तरह
मैं उसके नील हृदय में खड़ी हूं.
मेरी मिट्टी गलने लगी है
मेरी शिलायें टूटने लगी हैं

उसने मेरे अंगों को काट दिया है
उसने मुझे चिता पर रख दिया है
उसने मेरी राख को शरीर पर मल लिया है
उसने मेरे मुण्ड को गले में पहन लिया है
उसने मुझे अपने नीलकंठ की
गूढ़तम गांठ में रख लिया है

मैं उसकी फैली हुई बांहो में
आकाश की सचित नीलिमा हूं.
मैं उसके पैरो में खजर की तरह बधी हू

मैं उसके उठे हुए चरण के नीचे धूप और
पृथिवी पर रखे चरण के नीचे
छाया बन बटी हू.

मैं उसके नृत्य की सहारमुद्रा का अन्तिम आह्लाद हू

उसके पास अजूबा भट्टिया हैं
उसके हर कमरे मे पातालतोड़ खाइयां हैं
सब उसके द्वार पर मलवा लाते हैं
अपनी भैंसागाड़ियां वही छोड़ जाते हैं.

जिस दिन ईश्वर ने उसके नाम अपनी वसीयत की :

उसने अपने सब चेक भुना लिये
उसने तिजोरियो के ताले तोड़ दिये
सारी नीवें खोदकर धन निकाल लिया
सारी गुप्त सुरंगो का पता लगा लिया.

उसने सब सडकें माफ कर दी.

अपने हाथ से सबकी नालियां बुहार दी
उसने पुराने मकान गिरा दिये
लोग नई इमारतों में रहने आ गये.

उसने सबके घरो को स्फटिक का बनाया है
सबके सरोवरों मे आकाश कमलो को खिलाया है
उसने हर कक्ष के देव को जगाया है.

सब वन-उपवनो मे उसकी हवाए बहती हैं
सब नदी समुद्रो में उसकी नावें चलती है
हर आकाश मे उसके विमान उडते हे.

उसके भेजे मृन्पात्रो में देवो को चिन्मय गंध आती है :

उन्होने अपने प्याले तोड दिये हैं
वे अब कल्पतरु के
फल नही चखते हे
नन्दन वन के क्रीडाशैल
उनका विस्मय नही हरते हैं

उनके रथ आकाश-भ्रमण से थक गये है
उनके मन किसी और ऊचे आकाश मे अटक गये है

लोग उसे सोना चांदी देते हैं :

वह चुपचाप उनके भूबन्द कमरों में जाता है
लोहे की दीवारों पर
आकाश का छोटा सा टुकड़ा चिपकाता है
उसके पांव डालने से
सोने का काला दरिया हिलता है
सर्प सबकी पी हुई अग्नि को उगलता है,

सब अपनी सम्पत्ति उसे देने आते हैं :
किसान अपने खेत और
माली बगीचे रख जाता है
गरीब दे जाता है अपनी भूख
मजदूर अपना पसीना रख जाता है
सैनिक रखता है अपनी तलवार
शूर अपना पराक्रम छोड़ जाता है
चोर लाते हैं चोरी का माल
वेश्या अपना भीगा हुआ अधोवस्त्र दे जाती है
कोढ़ी दे जाता है अपनी फफूंद
बीमार अपनी खाट छोड़ जाता है.

वह अपने वक्ष पर हाथ रख कहता है :
'इधर केवल ईश्वर ही आता है.'

ऊचे कदवाले लोगो के लिये उसके बाहर एक सूचना है .

'यहा केवल मिट्टी ही आती है
सब अपने जूते बाहर ही उतार दो
अन्दर लेकर आना मना है.'

उसने पर्वतो को पानी कर दिया है
उसने पानी मे वसी डाल दी है और
जाल चारो तरफ फैला दिया है
पानी मे जलचरो का शोर है
पहले फसने की सघम दौड है
उसका शरीर उफनने लगा है
समुद्र की तरह महकने लगा है,

उसका कारोबार बहुत बढ गया है
उसका लेन-देन दूसरी दुनियाओ से हो गया है

वह सब तरह का कच्चा माल खरीदता है
बदले मे अपने नाम का सिक्का देता है

उसका सिक्का सारी दुनिया में चलता है
उसके देते ही हर द्वार खुलता है.

तुम उससे कुछ भी खरीद सकते हो
मिट्टी सोना पानी आकाश
सूर्य चन्द्र नक्षत्र प्रकाश
धन पदवी कीर्ति
योग भोग मुक्ति
यहा तक कि ईश्वर को भी चाकर रख सकते हो.

उसके यहा सरोवरो मे शाम नही उतरती है
खिले हुए फूलो की छाया म
देवो का सगीत चलता है
उसके यहा हसो की सख्या बढती जा रही है
उसकी मुस्कान की चादनी मे वे
मुश्किल से पहचाने जाते हैं

जबसे वह इस लोक मे रहने आ गया है
दिन का आना जाना और मिजाज बदल गया है
उसने शहर और शहर से बाहर सब एक कर दिया है
शहरो म सुनसानो और सुनसानो मे शहरो को रख दिया है

उसके यहाँ असख्य चौराहे हैं
कही से भी जाओ सब मुकाम पर ले जाते हैं

वह जीवितो को कधो पर ढोता है और
मुर्दो के साथ साथ चलता है
वह दृश्य को बुझाता है और
अदृश्य पर जलते दिये रखता है

वह राई को पहाड कर रहा है और
पहाडो को नीचे उतार रहा है

उसने अग्नि को अधो-मुख जलाया है
उसने नदियो को ऊपर बहाया है

उसके नाम से
पृथिवी झुकने लगी है
उसकी बेल आकाश छूने लगी है.

उसके पास विलक्षण अस्त्र हैं
वह शरीर के अन्दर शरीर
शरीर के अन्दर शरीर
शरीर के अन्दर शरीर का छेदन करता है.

उसके पास विलक्षण मन्त्र हैं
वह मन के अन्दर मन
मन के अन्दर मन
मन के अन्दर मन का अन्वेषण करता है.

उसके पास विलक्षण तन्त्र है
वह इस लोक से उस लोक
उस लोक से उस लोक मे ले जाकर
ऊपर अपना घर दिखाता है.

उसने मुझे साथ रहने बुलाया है.

मैंने अपने कपड़े फाड़ दिये हैं
मैंने जलते हुए दिये बुझा दिये हैं.
मैं सबको अन्दर
सोया छोड़ आयी हूं
घर के द्वारों को बन्द कर आयी हूं.

पिछले सुनसान मार्गों से मेरा रथ बढ़ता है
हर मोड़ पर अपना पहिया बदलता है
मैं एक सरोवर एक फूल एक देव से मिलती हूं
फिर फिर अपने दिये बुझाती
आहटें कुचलती हूं.

मैं शहरों से बचकर निकलती हू
नागरिकों को देखते ही घूंघट कर लेती हूं.
राजा बाहर मेरी अगवानी को आते हैं
महल में ठहरने की मनुहार करते हैं.

मैं पैरों में जूते पहन लेती हूं
उसके नाम की लोई ओढ़ लेती हूं
मेरे रथ में पंख निकल आते हैं
घोड़ों के पैर अब शून्य में पड़ते हैं.

मेरा रथ रुकते ही वह दौड़कर आता है
दिया ऊंचा करके मुझे
मेरा नया घर दिखाता है

उसमे दर नही दीवार नही
छतें और फर्श नही
दिशा न देश है
समय का सन्दर्भ नही
अंधेरा न प्रकाश है

घूंघट हटने से पहले ही वह मेरा मुख देख लेता है
एक नया नाम देकर
मुझे अन्दर कर लेता है

वह मेरा अन्तिम दिया बुझाकर
एक नया दिया जलाता है
वह मेरी ही मिट्टी से ब्रह्माण्ड रचता है
लेकिन मुझसे मेरी धरती छीन लेता है

कभी वह मुझे पर्वत की तरह उठाता और कभी
खन्दक की तरह गिराता है

उसने मेरी सासो की सीढिया बनायी हैं
मेरे ही शिखरो पर
सूली की शैया बिछायी है

फिर भी वह मुझे चलने के लिये
अपनी निजी पृथिवी
और बोलने के लिये
अपना निजी आकाश देता है.

वह मेरा हर शब्द सुनता और
मेरे हर दृश्य मे से चाहे जब गुज़रता है

उसने मेरे सारे खत पढ लिये हैं
अपने एकान्त मे मेरे टुकड़े रख लिये है.
उसे मेरे हर आगन्तुक का नाम मालूम है

लेकिन वह मेरी लीक नही तोडता है
किसी के भी साथ मेरा नाम नही जोडता है.
उसने मेरे सारे कर्ज़ चुका दिये हैं
उसने सारे मुकदमे जीत लिये हैं
सर्वोच्च न्यायालय ने सारे कागज उसके हाथ मे रख दिये हैं.

उसने भीड को विदा कर दिया है
मेरे शरीर का सब गोद धो दिया है

मैं चिकने भूमिखण्ड की तरह
उसके हाथों से फिसल जाऊंगी
जिसे वह बोना चाहेगा
बातें करते हुए
अपनी कीर्ति में.

मैंने अपनी शिला पर उसका नाम लिख लिया है
उस शिला को
अपने हृदय के पानी में गाड़ दिया है
मेरा आकाश उस सरोवर को प्रतिध्वनित करता है.

मैं अपनी मिट्टी बाहर रख रही हूं
उस आकाश को और बड़ा और बड़ा कर रही हूं
मेरा रोयां रोयां सुई हो गया है
अब हर जगह वही आकाश बोल रहा है

बाहर के आकाश के भी स्पन्दन बदल गये हैं
वे अब और कोई शब्द नहीं पकड़ते हैं.

घरों में सरोवर हिलने लगे हैं
मछलियों के पंख निकलने लगे हैं
वे अब सिर्फ़ मोती चुगती हैं
बूंद बूंद में वही शब्द पीती हैं.

मैंने देववृक्ष की शाखा तोड ली है
मैंने काले पहाड की स्याही घोल ली है
मैंने समुद्र का बुक्ता बनाया है
लिखने को पृथिवी का कागज़ बिछाया है

सर्प अपने हज़ार शीशो को मेरी तरफ हिलाता है
एक श्वेत ग्रीवा पर
हस का तृतीय नेत्र खुलता है
गुरुग्रह ने भी अपना आसन छोड दिया है

लेकिन मैं एक भी शब्द नहीं लिखती हू
उसकी पारदर्शिता पर
उगली रखने के लिये
सारे जगत की स्याही घोटती हू

उसका सद्यजात माथा नीचे झुकता है
मेरी अनामिका का सर्पदंश सहता है

बार बार उसका माथा उगता है
झुक कर
मेरी अनामिका का   अर्जित
अन्धकार पीता है.

मैं बार बार उसकी पारदर्शिता छूती हूं
उसके माथे पर
विष बेल से लिपटा हुआ
कालवृक्ष रचती हूं

मैंने सारे जगत की स्याही घोंट ली है
मैंने काल वृक्ष की टहनी तोड़ ली है
मैंने स्नान ध्यान खाना पीना छोड़ दिया है

मैं अपनी अनिद्रा को
कागज़ की तरह फैलाती हूं
महाकाल की चाल का
उस पर नक़्शा बनाती हूं
एक सुई के निशान पर वह स्तम्भित होता है.

अपने विकराल कदमों से पीछे लौटता है
उसकी 'हुंकार' से पहले ही
वह नन्हा निशान फटता है
निगली हुई सृष्टि को ऊपर उगलता है.

मैं बार बार जगत की स्याही घोटती हूं
उसके सद्यजात माथे पर
कालवृक्ष रच
अपने रेशमी आंचल से
उसे बार बार पोंछती हूं.

इसीलिए मैंने
स्नान ध्यान खाना पीना छोड दिया है
सुई की नोक पर
उसका नाम लिखने के लिये
अपनी अनिद्रा को कागज की तरह फैला लिया है

मेरे महाजागरण मे वह धीरे से आता है
सुई पर खडा हो
महाकाल रात्रि को बडी बारीकी से सीता है

मैं उसके नाम के एक सहस्र टुकडे करती हूं
हर टुकडे मे नया नाम
और एक नया ब्रह्माण्ड रखती हूं

हर बार वह नया नाम फटता है
अन्तर्गत सृष्टि को बाहर उगलता है.
मैं हर नये नाम के एक सहस्र टुकड़े करती हूं
हर टुकडे मे नया नाम
और एक नया ब्रह्माण्ड रखती हूं

मैंने सारे जगत की स्याही घोट ली है
मैंने कालवृक्ष की टहनी तोड़ ली है
उसका सद्यजात माथा नीचे झुकता है
मेरी अनामिका का सर्पदंश सहता है

मैं उसके पास उसे रख रही हूं
उसकी ही बातें उससे कर रही हूं

मैंने अपनी सब बांहें फैला ली हैं
उन पर दियों की पांतें जला ली हैं

देवताओं की आंखों की तरह
मेरे दिये उठते हैं
नीचे के अंधेरों को
दीवट की तरह खड़ा करते हैं

अब सब जगह उसका चेहरा है
हर सर्प के माथे पर सूरज और
हर सूरज के नीचे
कृष्ण-व्रण गहरा है

मै उसकी आंच मे अपने को जलाती हू.
जलने के लिये अपनी राख को बार बार कोयला बनाती हूं.

वह पर्वत के शिखर पर बैठा है
पर्वत एक नीला आकाश है
वह स्वय एक नीला आकाश है

वह आकाश की नीलिमा लेकर नीचे उतरता है
छोटे छोटे आकाशो मे नीलता रखता है

वह अपना अर्धांग बाट रहा है
आकाशो मे नील, नील मे नीलता रख रहा है

वह पर्वत के शिखर पर बैठा है
पर्वत एक नीला आकाश है
वह स्वयं नीला आकाश है

वह हर पल
अद्‌भुत रस की रचना करता है
मेरे हृदय के रोमो को
बढाकर
मेरे शरीर पर सुइयो की तरह खडा करता है।

मैं उसकी ईदाता प्रकाशित करने के लिये
पुरातन दिये उठा रही हूं
सूरज को नीचे और अग्नि को ऊपर जला रही हू
मैं सारे जगत की ओट मे उसे देखती हू
अपनी आंखो म आख—आख म एक और आख रखती हू

वह अपने ही प्रकाश से मुझे छूता है
दियो को ओलट मे और
अन्य सभी उपकरणो को स्वस्थान मे रखता है

मैं अपनी लज्जा से आप ही मरती हू
अपने अंधेरो को और घना करती हू

वह मुझसे मेरे बहुत पास मिलता है
मेरे ही अन्दर तिरछा खडा होता है
मैं अपनी वक्रता म उसकी बंकिमा छुपाती हू
जगत के सारे रास्तो को ऋजु बनाती हू

उसने मन्दिर की प्रतिष्ठा बदल दी है
सबके नाम की तख्ती लटका दी है.

उसने मेरे स्थान नियत कर दिये हैं
पहरेदारों के लिए द्वार खुले कर दिये हैं
मेरी निजता बाहर चबूतरे पर बैठी है:

मेरी मिट्टी बहने लगी है
मेरा आकाश टुकड़े-टुकड़े हो गया है
मेरी हवाएं घर के बाहर फिर रही हैं

मैंने अपने शरीर को पानी कर लिया है
मैंने उस पर आग से अपना नाम लिख लिया है

उसने भी किले की दीवारें देख ली है
जहां तहा खाइयां खोद ली हैं
उसने रास्ते पाट दिये हैं

सेना में शस्त्र बांट दिये हैं

उसकी हंसी
चट्टान की तरह
किले की दीवार से उतरती है
मुझे हिला
क्षण भर के लिए
मेरे नाम को काला करती है

दूसरे ही पल में उस पर
अपना सरोवर रखती हूं
बहुत दिनो के जंग खाये अपने अस्त्रों को घिसती हूं

वह समूह के साथ मेरे सामने आता है
लेकिन मेरे अन्दर—निरस्त्र
—अकेला गुजरता है.

वही कुछ गिरकर टूट जाता है.

मैं अपनी कृतज्ञता मे
सारे युद्धास्त्रों को छिपाती हूं
अपनी आर्द्रता मे
अपने नाम को जल्दी से डुबाती हूं

उसकी हंसी की चट्टान फूल की तरह
सरोवर से निकलती है
अपने शरीर पर
मेरे नाम के अक्षर दिखाती है

वही कुछ गिरकर बार बार टूट जाता है
मेरी मिट्टी को उसके
बहुत करीब रख जाता है.

वह मुझे सब कमरों में बांट रहा है
मुझे तोड़कर
मेरे आकाश को एक कर रहा है

लोग काले लबादों में
उसकी तरफ आते हैं
मैं उनके बढ़े हुए नाखून देखती हूं
और छुपे हुए खंजरों से आशंकित होती हूं

मैं बचाव में
उसके सामने खड़ी हो जाती हूं
और अपने अस्त्रों को बाहर निकालती हूं

उसकी हंसी मेरे बालों में झरती है
वह मेरा चेहरा घुमाता है और
मेरे सब हाथों को
अपनी छाती में रखता है

मैं उसके अंदर होकर भी उसकी आंखें देख लेती हूं
उसकी क्लिन्न दृष्टि के भीतर झांक लेती हूं:

मुझे हर दृश्य भीगा हुआ लगता है
उसे ही हर जगह
प्रतिबिम्बित करता है

वही काले लबादे मे अपनी तरफ आ रहा है
मैं उसके बढे हुए नाखून देखती हू
और छुपे हुए खजर से आशक्ति होती हूं

वह दृश्य मे से उठा मुझे दृष्टि मे रखता है

मेरे हटते ही
हर दृश्य का अधेरा हटता है

वह फिर फिर हसता है
फिर फिर मेरे हाथो को छाती मे रखता है

अचानक
मैं उसका खेल समझ लेती हू
उसी क्षण
दर्पण से बाहर निकलती हू

उसने नेपथ्य मे कई दृश्य रच लिये हैं :
वह एक साथ
कई पात्रों में आ रहा है
मैं उसकी हर भूमिका सह रही हूं
उसके निजी चेहरे को याद कर रह रही हूं

मैं उसके खेल को अधूरा छोड़ आयी हूं
सब खिलौनों में से साफ़ निकल आई हूं
उसके गण मुझे उठाने आते हैं
उसके खेल का महत्व समझाते हैं

मैं उनकी आंखों का कांच निकालती हूं
और उनके गड्ढों मे
अपना बिम्ब रखती हूं

वे मुझे लेकर लौट जाते हैं
अपनी आंखों को उसे दिखाते हैं

मेरा बिम्ब उसकी आंखों में चमकता है
हंसी के साथ फिर नीचे उतरता है

वह मुझे अपने हृदय में रखता है
सबके कांचों को वापस देता है

वह मुझ पर ही रखकर मुझे तोड़ता है
मनमाने ढग से मेरे टुकडे जोड़ता है

वह मुझे वहुत से प्याले देता है
मैं उन्हें
अपनी आकांक्षा के उत्तर मे पीती हूं

उसके जहर को पानी करती हूं

पानी मेरे होठो को गदला करता है
फूल की नाल मे कीड़े भरता है

मैं कमल की तरह ऊपर उठती हू
धुले हुए प्याले मे फिर जहर भरती हूं.
मेरी आकांक्षा आगे बढ फिर पीछे हटती है
जहर को पानी कर
क्षण मे
फिर जहर करती है

मैं हर घूट मे काला सूरज पीती हूं
अन्दर भट्टी मे डालकर
फिर उसे उगलती हूं

चल रहे वक्त मे
मेरी हर घूट रुकती है
उसकी हथेली पर लाल सूरज रखती है

मैं सबके प्यालों मे पानी भरती हूं
हर घूट में एक सूरज
और हर सूरज में
काल का पहिया रखती हूं

लेकिन सब अपने प्याले को
आकांक्षा के उत्तर में उठाते हैं
सूरज को अलग कर कोरा पानी ही पीते हैं

काल का पहिया
प्याले की दलदल मे धंसता है
उसके नीचे हर सूरज मरता है

मैं अपनी मिट्टी को बार बार
चाक पर रखती हूं
सबके चेहरों मे उसका चेहरा गढ़ती हूं

मेरा विस्तार मुझमें ही पैर लम्बे करता है
मेरी यात्रा को लौटाकर
मेरे अन्दर ही रखता है.

मैं उसे सबके प्याले देती हूं
प्याले मे नाग
नाग मे नेत्रमणि रखती हूं

वह बारी बारी से सबके प्याले छूता है
उनमें लगी हुई कीचड़ को पीता है

मेरे प्याले मे अब उसकी रात्रि है.

मैं उसकी रात्रि को अपने रक्त से जलाती हू
पहिये को साफ कर आगे बढाती हूं

मेरे रक्त की रोशनी मे
कालचक्र चलता है
उसके आकार में ही सारे प्याले गढता है.

मैं उसके माथे से अंगारे चुनती हूं
उन्हें अपने धनुष की
डोर में पिरोती हूं
वह मेरे फूलों से आहत होता है
अपनी आंख को अग्निकुंड करता है

मेरी प्रत्यंचा मोम सी पिघलती है
मेरे धनुष को
तीर सा सीधा करती है

मैं खुद एक तीर हो जाती हूं
उसके हृदय में धंस
कहीं दूर निकल जाती हूं

सारे एकान्तों में वह एक तीर रखा है
उस पर
उसके हृदय का रक्त
बूंद बूंद झरता है.

मैंने उसके सिर की माला निकाल ली है
अपने केशों में
गंगा बांध ली है
मेरे अन्दर अवतरण हो रहा है
पूरा मरुस्थल चंचल हो रहा है

मेरी यात्रा प्रकाशित होने लगी है

मेरे पैर चमकने लगे हैं
हवा तक को हाथ पकड़ने लगे हैं.

मैं पीछे लौटकर भी बहुत दूर आ गयी हू
अपने एकान्त मे सबको पा गयी हू.

फिर भी अभी बहुत आगे जाना है
उसके एकान्त मे अपने को पाना है

एक बहुत छोटे बिन्दु मे
उसका कक्ष खुलता है
मेरे ही दरवाजे मे
अन्दर का वह युगल हिलता है

उसने मुझे
खामोश मणिया दी हैं
मैं उनमे खुद को रख
उन्हे जलाती हू
फिर उनके प्रकाश मे बाहर निकलती हू

वह मुझे ढूंढने आता है
मणियो के खोल को वापस ले जाता है

वह अंधेरे की मणि बनाता है
मणियो को फिर अधेरा पहनाता है

मैं बार बार उनमे
अपने को रखती हूं
अपने ही प्रकाश मे फिर बाहर निकलती हू

एक दिन एक मणि मे
वह मुझे जलते देख लेता है
बन्द दरवाजे से
मणि के अन्दर आ जाता है

तब से मैं बाहर नही निकलती हू
अपने ही अन्दर
सारी मणियो मे जलती हू-

वह मेरी मिट्टी छान रहा है
मेरे जन्मो को मुझसे अलग कर रहा है

मेरा वज़न हर बार हलका होता है
मेरा पलडा तुलादण्ड छूता है
मैं बार बार आकाश मे उठती हूं
उसके काटे को
माथे से लगाती हू

मेरा रक्त
सारी दुनिया की मिट्टी मे गिरता है :

मैं उसको लाल मिट्टी देती हू
सबके जन्मो को
ऋण से अलग कर छानती हू

सबके पलडे आकाश मे उठते है
उसके काटे के बीच से   ऊपर निकलते हैं

सारे देव
मेरा रक्त   सू घने आते हैं
अपने मानिक आगन मे
मिट्टी का पौधा लगाते हैं

मैं अपने को उनके बीजो मे रखती हू
उनके पौधे लेकर
फिर नीचे उतरती हू

उसके बगीचे मे
अब मैं ही जलती हूं
सबकी मिट्टी की गंध में खुद ही निकलती हूं

मैं फिर एक खेल रचती हू
अपने खुशबूदार धुए से
कपडा बुनती हू

सब उसे छूते ही अपना आपा भूलते हैं
अपने ही घर मे
अपने से परदा करते हैं

अचानक मैं अपने खेल की
निर्ममता देख लेती हू
ओलट मे खडी हो
उसके दीपक को ऊचा करती हू

उसकी आच मे
मेरा कपडा जलता है
सबके चेहरो को सबके सामने करता है

वे मेरे खेल का अर्थ समझते हैं
अपने घर मे अब
बेपरदा रहते हैं.

वह बाहर आकर
फिर अन्दर चला जाता है
अंदर से बाहर की कुण्डी लगाता है

मैं उसके होने को अनदेखा करती हूं
खिड़कियों में आग
और आग मे हवा रखती हू

वह मेरी चित्रित दीवारों का ढक्कन उठाता है
हर ढक्कन के नीचे
पानी का बरतन दिखाता है

मैं अपनी आकांक्षाओं में
लपट की तरह उठती हू
खुद को हटा
उसके बरतन मे बुझती हूं

वह मेरी दीवारो को बर्फ से लीपता है
पानी के बरतन को उलटा कर
फिर सीधा रखता है

उसके खालीपन मे
मैं—
उसकी आकाक्षा का उत्तर बन जलती हूं
अपने को उससे ही भरकर
उसमे ही खाली करती हूं

वह दुनिया का नक्शा बनाता है
मेरे नाखूनों को उन पर चलाता है

जगह जगह से धरती फटती है
कहीं सोना
तो कहीं आग उगलती है

मैं अपने नाखूनों को अंदर लेती हूं
उसकी छाती में
बड़ी दूर तक चुभोती हूं

उसके अंदर भी धरती फटती है
सोना नहीं
बस आग ही उगलती है

मैं आहत हो
अपने ओर भी अंदर लौटती हूं
अपने नाखूनों से
अपने को ही फाड़ती हूं

मेरे अंदर भी धरती फटती है
उसका समुद्र दिखा
ऊपर से जुड़ती है

मैं अपनी गीली रेखाएं चखती हूं
उनके खारेपन से
दुनिया का खालीपन भरती हूं.

वह परदेस से लौटकर आता है
इस बार
हथेली पर
मेरा नाम और पता लिख ले जाता है

मैं अपनी आंखों को तहखाना बनाती हूं
उसकी लिखी चिट्ठियों को नज़रबन्द रखती हूं

वह लिफाफे पर से मेरा नाम मिटाता है
अन्दर के मजमून को दुनिया को पढ़ाता है

मेरी ही रोशनी में
उसके अक्षर चमकते है
सारी दुनिया के लोग
मेरे घर के द्वार पर
उसका नाम और पता पढ़ते है

मैं सबको अपना नाम और पता बताती हूं
उसके पत्रों के एकान्त में
अपना होना दिखाती हूं

सब मेरी बात को हंसकर उड़ाते हैं
अपने तहखानों में
उसी मजमून की चिट्ठियां दिखाते हैं

मेरी महिमा धूल बन उडती है
सबको लपेट
फिर आधी की तरह उसकी तरफ बढती है :

उसके शरीर पर चन्दन लिप जाता है
माथे के अग्निकुड मे वह
मेरी प्रतिमा दिखाता है

मेरी परछाइयां
उसके शरीर पर
सापो की तरह लिपटी हैं
और मेरा अमृत मन
उसके माथे पर नित्योदित कला के रूप में
खिचा हुआ है.

मैंने अपने उद्देश्य को
उसके कंधों पर   हाथी की चर्म की तरह
डाल दिया है.

वह मेरे मन्तव्य से आतंकित होता है

कालनृत्य की भूमिका मे
अपने शरीर से
रेशम को अलग करता है

मै उसके रोम रोम को सुसज्जित करती हूं
अलंकारों की छाया मे
अपने अर्जित अस्त्रों को रखती हूं

मेरा उद्देश्य उसके सिर पर खुलने लगता है
वह उसे
अपने हजार हाथो से थाम
नाचने लगता है

लेकिन
उसके माथे की शुभ्रता विस्तृत होती है
खायी हुई सृष्टि को बाहर
अर्धचन्द्र शिला पर रखती है

उसकी करुणा में
मैं तीर की तरह चमकती हूं
अपने अक्षरों को और स्पष्ट करती हूं

वह बार बार आतंकित होता है
मेरे मन्तव्य की चौंध में
अपनी आंखों को
हाथों से ढकता है

कालाग्नि के तट पर
मैं अपने कपड़े बदलती हूं
उसकी भूमिका'में खुद'को सज्जित करती हूं

मेरा अन्धकार
उसके माथे की कला पीता है
फिर घुटनों के बल बैठकर
एक ही ग्रास में
सारे जगत को निगलता है

मेरा उद्देश्य और भी आगे जाता है
सारे ज्योति बिम्बों को
अन्दर डुबाता है

मैं अपने अन्धकार के साथ
और भी विस्तृत होती हू
सारे देवो के साथ उसे भी
अपनी लपेट मे लेती हू

मेरा पदाघात
उसकी छाती पर होता है
एक क्षण मे
मेरा अन्धकार नीचे उतरता है

मैं भागकर नन्ही सी गुफा मे छिपती हू
बन्द दरवाज़े से
उसका उठना देखती हूं

उसकी छाती पर मेरे पैरो की छाप है

वह नीचे झुकता है
मेरे गिरे रेशम से अपना वक्ष ढंकता है

मैं उसके चेहरे से
कीलों की तरह उगे हुए
बंजर मैदानों को चुनती हूं

धूप भरे आसमान को
नदियों में रखकर पीसती हूं :
मेरा लेप उसके गड्ढे भरता है
मैदानों में खेत और
खेतों में धानी रंग रखता है

मैं उसके मुख से भूख पोंछती हूं
उसकी आधी रोटी को
खेतों की जड़ों में फेंकती हूं

फसलों के मुहाने पर पूरा चांद उगता है
सबकी थाली में साबुत रोटी रखता है

मैं उसका चेहरा तोड़ती हूं
एक तरफ चमकीला आसमान
दूसरी तरफ
दुनिया का अंधा नक्शा रखती हूं

वह कांच के टुकड़े से
दोनो दृश्यो को पिरोता है
आदमी के अंधेरे को
सुबह की कच्ची धूप पहनाता है

बार बार उसका चेहरा टूटता है
दुनिया के अंधेरे को रोशनी से जोड़ता है

पर आदमी हर बार
रोशनी अलग करता है
धूप के कपड़े उतार
अपनी नग्नता में
दूसरे आदमी को खड़ा करता है

वह बार बार आदमी की नग्नता सीता है
कांच की सुई मे सारे दृश्यों को पिरोता है

मैं उसके टूटे हुए चेहरे को लेकर भागती हूं

अपने रेशम के छोर मे
यह लोहे का टुकड़ा बांधती हूं

हरी दुनिया का सोना आशंकित होता है
बढते हुए कालेपन में
कभी कभी चमकता है

मैं सोने की खण्डता सीती हू
उसके पीलेपन को
लोहे की आंच का स्थायी गुण बनाती हूं

रेशम के छोर पर
लोहे का टुकड़ा हसता है
अपनी नयी उगी बांहों से
मेरे कंधे पकड़ता है

उसकी हसी से सबके बर्तन भरते हैं
चांद की पूरी छाया को प्रतिबिम्बित करते हैं।

अब उसकी हंसी
मैदानों की तरफ बढ़ने लगी है
मेरा श्यामता को विरल कर
छिटकने लगी है

मैं उसके हास से सुइयां बनाती हूं
अपने हर रोम को
एक सुई पहनाती हूं

मेरा रोमांच
उसकी शुभ्रता को रंजित करता है
चांदनी के कोलाहल को
नदी की शिला पर एकत्रित करता है

हमारी आहट से
पत्थरों के पंख खुल जाते हैं
वे हमारी बातचीत को लेकर
हवा मे उड़ जाते हैं

मेरा रोमांच आरक्त होता है
उसकी शुभ्रता में छिपने के लिये
छाया टटोलता है

वह अपने शरीर के दो टुकड़े करता है
आधे मे मुझे

अपने साथ खड़ा करता है

मैं उसके अंगों में
अपना संकोच रखती हूं
उसके अंगीकार में
अपनी दुर्भेद्यता को अर्पित करती हूं.

अपने साथ खड़ा करता है

मैं उसके अंगों में
अपना सकोच रखती हूं
उसके अंगीकार में
अपनी दुर्भेद्यता को अर्पित करती हूं.

उसकी आकाशगंगा के किनारे
मेरी रात्रि लेटी है
सफेद सन्नाटे मे बहुत देर रहकर
अभी अभी बाहर आयी
नीद की तरह.

मैं सुबह की तरह उसके पार्श्व से
धीरे से निकलती हूं
और सफेद जंगलों को आंखों के
करीब रुक जाती हूं :

उसकी पहली नीद टूटती है
मिट्टी से भरी हुई
और दूसरी नीद
मुझे देख भागने लगती है
अपनी सम्पर्कहीन शान्ति के
मैदान में.

मैं उसकी दोनों नीदो को चुराती हूं
अपनी नीद में रखकर
उन्हे मिलाती हूं :

फिर उसके पार्श्व से
धीरे से निकलती हूं
—सारी दुनिया को—
मिट्टी में गड़ी हुई
एक नई सुबह देती हू.

मैं अपनी घड़ी
उसकी घड़ी से मिलाती हूं.

अब सुबह देर से नहीं होती है
अब शाम जल्दी नहीं आती है

अब धूप
मेरी आंखों पर परदा नहीं डालती
अब छाया
मुझे छोटा या बड़ा नहीं करती

सब मेरी घड़ी देखते हैं
दोनों सुइयों को देखकर चकित होते हैं :
ये रुह-ब-रुह होकर भी एक ही वक्त बताती हैं
बिना किसी आवाज के ही
सबका आना और जाना जताती हैं

मेरी सुई के इशारे पर काल भी रुकता है
सबको मेरी ड्योढ़ी पर उतार कर
खाली रथ लेकर आगे बढ़ता है.

मैं
अपने भरे हुए घर मे उसे लेकर आती हूं
उसके धागे मे सबको पिरोती हू

वह दरवाज़े पर खडा हो
सबको अपनी माला दिखाता है
हर मनके के चेहरे मे
अपना नाम
और अपने नाम मे रुका हुआ
काल का पहिया दिखाता है.

उसकी शान्ति और
पहाड़ों के नृत्य के बीच
मैं वेश बदलने के लिए
जगह ढूंढ रही थी :

आकाश के हज़ारों सिर मेरे हाथ में थे
और पृथिवी के हज़ारों पैर
मुझसे जुड़कर नाचने के लिये आतुर

इन्हें एक खास क्षण में मुझे पहनना था.

मेरे अन्दर की बातें
सर्पों की तरह ऊंचे उड़ रही थी
और एक सहृदय पक्षी
उन्हें पकड़ पकड़ कर
उसके शरीर के पास रख रहा था.

उसके अधखुलेपन मे मेरे प्रवेश करते ही
उसने आंखें बन्द कर ली थी
उसी गुप्त गृह में मैंने
अपनी वेशभूषा बदली थी.

मेरा शृंगार उसे स्पन्दित करता है :
वह अपना अकेलापन छोड़कर
हर बार
मेरे साथ मुझसे खेलने को
बाहर नीचे उतरता है

मैं सबसे कहती हू-
'काल सुन्दर है
और अब अगले अकों मे   आप
मेरी सुन्दरता देखेगे'

लेकिन सामने चल रहे दृश्य मे
वे मेरी विभीषिका से डरते हैं
मेरे शरीर से गिर रहे खून मे
पानी की बू   और उसमे
रेंगते कीडो को देखते है

मेरी काली चमडी के धुए से उनका दम घुटता है
प्रेतो के साथ मुझे हसते देखकर
उनका हृदय दरकता है
वे मेरा वचन याद नही रखते है
मुझे देखने से पहले ही
डरकर भाग जाते हैं

मैं गिरे हुए पर्दे के बाहर आती हू
खाली कुर्सियो के पार
रगशाला का
खुला दरवाजा देखती हू

दिल्ली २२ ६.५ ७४, -२

मेरे रक्त मे
अब वह गंध नही रही
जो रक्त मे होती है

उसने मुझे अधा कर दिया
उसने मुझे बहरा कर दिया
उसने मेरी जुबान काट ली
उसने मुझसे
सारी गधो को मिटा दिया
मेरी त्वचा अब कुछ छू नही सकती

फिर भी वह शान्त नही है
मुझे सुलगाने मे
उसका दिन दिन नही
रात रात नही है

मैं अब पीछे भी नही लौट सकती
अपने अन्दर को
बाहर नही कर सकती :

इस तरह समय
अपने से बहुत दूर बीतता है

लेकिन
बहुत दिनों बाद
वह मुझे एक चीज छूने को देता है :

छूकर लगा
मैं उसे चूम रही हूं
चूमकर लगा
मैं उसे सूंघ रही हूं
सूंघ कर लगा
मैं उसे देख रही हूं
देखकर लगा
मैं उसे सुन रही हूं

वह मेरा अपना ही रक्त था
उसके ऊंचे आकाश में.

उसने मेरे कुटुम्बियों के
मरने की तारीखें बतायीं और
मुझे अपने सुगन्धित वस्त्र और
प्रलेपन देखकर
उनका शव सजाने के लिए भेज दिया

तारीखें निकल गयी
वे ज़िन्दा रहे
और मैं सबकी मौतों को
अन्दर ढोते हुए चलती रही.

उसके दिये वस्त्रो और प्रलेपनो से
मैंने अपने ही शव को कई बार सजाया

पर यात्रा कभी नही निकली.
मौतें अब भी होती हैं
मेरे अन्दर
मेरे बाहर
पर वे मेरे कुटुम्बी नही होते

फिर भी मैं हर शव को
उसका दिया कपड़ा उढाती हू
उसके प्रलेपनो से
उनके अंगों को सजाती हू

इस तरह एक पल मे
असंख्य शरीर
मेरे अन्दर उतरते हैं
मेरे हर रोम में
सैकड़ों श्मशान रचते हैं

मैं हर श्मशान मे
उसका रक्षक त्रिशूल गाड़ती हूं
उसके नाम के कपड़े की
ध्वजा उड़ाती हूं :

फिर भी वह मुझे वापस नही बुलाता है
मेरे नगर को
'कृतान्त का नगर' कहने से
बाज नही आता है·

उसने कहा था :
'एक दिन मैं तुझे सजाऊंगा
सारी दुनिया के गहने पहनाऊंगा.'

बहुत बरसों बाद
उसने मुझे सज्जा कक्ष में बुलाया था
शीशों में जगमग
अपना वैभव दिखलाया था :
मैं ऊपर उठकर अचानक बहुत नीचे गिर गयी थी
एक अन्य अर्थ के साथ
बहुत गहरे उतर गयी थी :

सबसे पहले उसने मेरे चेहरे से
चांदनी पोंछी थी
फिर मेरी 'कराह' पर अपना पैर रख
टूटे हुए दर्पण की नोक से
मेरे माथे की धरती खोदी थी.
उसने वहां गड़ा हुआ त्रिशूल उकेरा था
मेरी ही उंगलियों की आग का उस पर
पोता फेरा था

तवसे मैं
सबके अंधेरों को खाती हुई
नहीं   समय को
नहीं   काल को
आगे बढ़ती हूं
बार बार अपनी उंगलियां सुलगाकर
अपनी ही आंच से
अपनी गड़ी हुई पहचान को ऊपर लाती हूं :

किसी के भी घर में जब कोई अंधेरा गिरता है
तब मेरे माथे पर यह रक्षक चिह्न उभरता है.

वह मुझे
कुछ लोगों से मिलने के लिए भेजता है
नक़्शे पर उनको रेखांकित करता है :

मैं उनसे
एक लापता सड़क पर मिलती हूं
अपना नाम और उसका काम बता
दिये गये गारे और मिट्टी के बावजूद
अभी तक न बने मकानों के बारे में पूछती हूं.

वे कहते हैं :
'बहुत दिनो पहले प्रसारित किया गया सन्देश
आजकल फ़रार है
पहली दुनियां मे दूसरी
और इन दोनों मे तीसरी

दुनिया गिरफ़्तार है.'

वे मुझे चिथड़ा हुई दीवारों के घरों मे ले जाते हैं
तवो पर
बुझे हुए चूल्हो की स्याही दिखाते हैं

मैं दुनिया का फूला हुआ पेट देखती हूं
फिर उसकी सुती हुई टांगों पर आती हूं :

दुनिया अब चल नही सकती.

मैं और भी आगे जानना चाहती हूं

मतलब आदमी के बारे मे
क्या वह तब से अब तक एक ही है
हमशक्ल हममिजाज़ हममर्ज़
और वह पहली दुनिया का आदमी
तीसरी दुनिया के आदमी से
कद मे
कितना छोटा या बड़ा है ?

मेरा अगला सवाल है दुर्घटनाओ के बारे मे

क्या वे सब जगह होती हैं
पहली और दूसरी और तीसरी दुनिया मे ? मसलन
क्या बच्चा स्कूल मे बन्द कही भी मर सकता है
क्या साइकिल सवार ट्रक से
चौराहे के बगैर भी कुचल सकता है
क्या नदियो मे लोग अब भी डूबते हैं
क्या हवाई जहाज़
देश की पहचान के बगैर भी गिरते हैं

और आदमी की नियति ?
जब बूढे लोग अकेले रह जाते हैं
जवान मा बाप के बिस्तर से बच्चे
सडक पर निकल जाते है
जब मौत के रजिस्टर मे
कितने ही ऐसे नाम दर्ज होते हैं
जिनके पास मरने का कोई कारण नही था

मतलब घरो मे फैलती हुई खाइया
सडको पर खडे होते पहाड

वे लोग धीरे धीरे बैठ जाते हैं
और माथे की सलवटो को नक़्शे पर फैलाते हैं

मैं और भी बहुत कुछ पूछना चाहती हूं
ऐसे बहुत से सवाल
जो आदमी ने आदमी के लिए पैदा किये

या
जो आदमी ने आदमी के लिये पैदा नही किये

लेकिन वे मुझे
आगे बढने से रोक देते हैं
अपनी किताब में जल्दी जल्दी कुछ लिख
मुझे 'लापता सड़क' के बाहर छोड देते हैं

मैं दुनिया के नक्शे से बाहर निकलती हू
अवहेलित वस्ती में खडे उसको
उसके शरीर के
किसी भी हिस्से से तोड़ लेती हूं

वह कहता है :
आदमी की एक हजार झुर्रियों पर
मुझे सीधा चलना है
उघड़े हुए धागों को सूत कर
नये धागों के साथ बुनना है.

फिर मैं नक्शे के अन्दर आती हूं
एक लापता सडक से
दूसरी लापता सडक पर निकलती हूं

कही न कही
उसके द्वारा रेखांकित चेहरे मिल जाते हैं
मेरे सवालो को जवाब म
या कभी सारे जवाबो को एक सवाल मे
रख जाते हैं

दरअसल
यही शुरुआत थी मेरी कविता की
लेकिन

[एक दिन वह मुझे (उखाडकर)
अपने जन्मदिन के वीतराग सरोवर मे लडा कर
मेरे शरीर से
सारे फूल तोड लेता है
और मेरी रक्तहीन जडो को
आकाश मे बोता है]

और मुझे अपनी कविता
यहीं से शुरू करनी पडती है

→प्रथम फ्लैप से आगे

प्रेम और वाद म युद्ध मे परिवर्तित हुआ यह सम्वाद या सम्प्रेषण हर अगली पक्ति म ज्यादा 'डिमाडिंग', ज्यादा दवावपूर्ण होता चलता है, सन्धि की शर्तों को आदमी के हक म विशालतर करता हुआ इस कविता म एक ऐसी अनिवार्य खीच है, एक ऐसी सगी वलवती जिद्द जो आदमी का यातना-मुक्त देखने के लिय किसी भी दूरी तक जा सकती है—मतलव (आदमी की मुक्ति के लिये) उस 'निजी चेहरे' का बढता हुआ 'नीलापन' भी उस रोकता नही, आतकित नही करता

कविता का कथ्य क्या हो, कविता की पहचान क्या हो, इसे काफी दूर तक वक्त तय करता है पर कोई परिचय, कोई अनुभव या साक्षात्कार जव वक्त को भी जज्व कर ऊपर निकल आता है, तव कविता अपना निणय खुद करती है, क्योकि उसके अन्दर सचमुच ही समय का वहुत वडा हिस्सा खो चुका होता है वह समय म मतलव लम्व समय म जीने की एक वहुत वडी 'इच्छा चिन्ता' से मुक्त हो चुकी होती है

अमृता की कविता म विभाजन मुमकिन नही है 'आदमी' और 'ईश्वर' का, घर' और 'दरगाह' का यह एक लम्वी यात्रा है जिसके पैर और भी निचली जमीनो पर चल रहे है और सिर और भी ऊचे आसमान म धस रहा है इस यात्रा का कोई विकल्प नही है, इसलिये इसम किसी भी आरोपण की गुजा-इश नही रही कविता की तरह ही कविता की स्त्री भी अविभक्त है, एक पडाव से दूसरे पडाव पर जाने के वावजूद, एक चरित्र से दूसरे चरित्र म प्रवेश करने के वावजूद

'मिट्टी पर साथ साथ' एक ऐसी कविता है, जो अपने साथ अपना होना सिद्ध करती है दूसरा कोई मोर्चा या दूसरी काई कसौटी ऐसी नहीं है, जिमक साथ या जिस पर इस अपने को प्रमाणित करना हो कविता अगर 'अपनी कविता' हो सके, विना किसी छद्म के, विना किसी व्याज या वहाने के, तो वह अपनी 'सम्वद्धता' या 'प्रतिवद्धता' को छोटा ही सही, लेकिन सच्चा अर्थ द पायगी कम से कम वह राई को पर्वत दिखान के गुनाह से वच सकेगी ☐

☐

दस रुपए

☐

जैकेट ॥ प्रणवकुमार वद्योपाध्याय